P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-9*(Part-1) May- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

# दक्षिण भारत में ईसाई धर्म : आरम्भ एवं विकास

**रमा गुप्ता**
प्राचार्या,
भागवत प्रसाद मेमोरियल
महिला महाविद्यालय,
अतर्रा, बॉदा, भारत

**सारांश**

मध्यपूर्वी एशियाई देश फिलिस्तीन में अंकुरित और पल्लवित ईसाई धर्म का भारत में आगमन कब, कैसे और किन परिस्थितियों में हुआ–इन्हें समझने के लिए दो ऐसे महत्त्वपूर्ण शब्दों पर विचार करना न केवल आवश्यक है बल्कि उपयोगी भी है क्योंकि सामान्यतः इन्हीं दो शब्दों से ईसाई धर्म जैसे विश्वजनीन धर्मों की प्रचार–प्रसार व्यवस्था की पहचान की जाती है। ये शब्द हैं –'मिशन' और 'मिशनरी'।

**मुख्य शब्द :** अभियान, प्रचार–प्रसार, ईसाई धर्म, मिशन' और 'मिशनरी'

**प्रस्तावना**

लतीनी शब्द 'मिस्सियो' से व्युत्पन्न 'मिशन' शब्द के अनेक अर्थ हैं जैसे, जीवन–लक्ष्य, प्रचार–कार्य, विशेष उद्देश्य, विशेष अभियान, विशेष कार्य–कलाप, प्रतिनिधि मण्डल, संस्थान आदि। धार्मिक अर्थ में जहाँ यह धर्म–प्रचार–प्रसार–कार्य का बोध कराता है, वहीं सामाजिक अर्थ में किसी विशेष उद्देश्य, अभियान, कार्य की ओर इंगित करता है, जैसे 'टेक्नॉलाजी मिशन', 'साक्षरता मिशन' आदि। लातीनी भाषा के ही 'मिस्सुस' या 'मिस्सनारियुस' शब्द से बने 'मिशनरी' शब्द का अर्थ है 'प्रेरित', 'प्रेषित' या 'भेजा हुआ' प्रचारक, संदेशवाहक आदि। इसका समानार्थी यूनानी शब्द 'अपोस्तोलोस' है। 'मिस्सियो' और 'मिस्सनारियुस' जहाँ संज्ञाएं हैं, 'मितो', 'मितेर' इनके क्रिया रूप हैं जिनका अर्थ 'भेजना', 'भेजा जाना' होता है। 'प्रेषित' (भेजा हुआ) के अर्थ में ही ईसा के बारह शिष्य 'प्रेरित' कहलाये।

ईश–पुत्र ईसा के जन्म के सहस्त्रों वर्ष पूर्व ही नबी इसायाह द्वारा की गई यह भविष्यवाणी कि "प्रभु की आत्मा मुझ पर छायी रहती है.....उसने मुझे भेजा है कि मैं दरिद्रों को सुसमाचार सुनाऊँ, दुःखियों को ढाढस बँधाऊँ, बन्दियों को छुटकारे का और कैदियों को मुक्ति का संदेश सुनाऊँ, प्रभु के अनुग्रह का वर्ष घोषित करूँ"[1] उनके जीवन–लक्ष्य, अर्थात् 'मिशन' को स्पष्ट रूप से प्रतिपादित करती है। अपने इसी 'मिशन–कार्य' को जारी रखने के लिए उन्होंने बारह 'प्रेरितों' को नियुक्त किया कि वे ईश्वर के राज्य–संबंधी और 'मुक्ति' का सुसंदेश जन–जन तक पहुँचा सकें। उन्होंने अपने प्रेरितों से कहा, "जिस प्रकार पिता ने मुझे भेजा है, उसी प्रकार मैं तुम्हें भेजता हूँ"[2] "तुम लोग जाकर सब राष्ट्रों को शिष्य बनाओ और उन्हें पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा के नाम पर बप्तिस्मा दो।"[3] ईसा के इसी अनुदेश का अनुपालन करते हुए उनके शिष्यों ने दुनिया के कोने–कोने में जाकर सुसमाचार का प्रचार–प्रसार किया। *'नया विधान'* के *'प्रेरित चरित'* में प्रारंभिक कलीसिया की मिशनरी गतिविधियों की विस्तृत जानकारी मिलती है।

यद्यपि 'मिशन' और 'मिशनरी' शब्द सामान्यतः ईसाई धर्म–प्रचार और प्रचारक के लिए रूढ़ हो गये हैं, तथापि सार्वभौमिक धर्मों की श्रेणी में गिने जाने वाले इस्लाम और बौद्ध धर्मों के सन्दर्भ में भी इनका प्रयोग होता है। भगवान बुद्ध का कथन यहाँ उद्धरणीय हैः "भिक्खुओ! अब विश्व के प्रति करूणा से ओत–प्रोत होकर अनेक के लाभार्थ, जन–कल्याणार्थ जाओ और ऐसे सिद्धान्त का उपदेश दो जो न केवल विचार में बल्कि आचार में भी प्रारंभ, मध्य और अन्त में यशस्कर है।"[4] बौद्ध धर्म की परंपरा के अनुसार, स्वयं भगवान बुद्ध ने धर्मप्रचारकों की पहली टोली को यह कहते हुए धर्मप्रचारार्थ भेजा, " भिक्खुओ! जाओ, आर्यसत्य का उपदेश दो..... ध्यान रहे, एक ही दिशा मे दो जन न जाएँ।"[5] 'कुरआन मजीद' में भी स्थान–स्थान पर ऐसे कथन प्राप्त होते हैं : "ये अल्लाह की आयतें हैं, जो हम ठीक–ठीक तुमको सुना रहे हैं और निश्चय ही तुम उनमें से हो जो संदेशवाहक (रसूल) बनाकर भेजे गए हैं",[6] "औद (इस रसूल का भेजा जाना) उन दूसरों के लिए भी है जो अभी उनसे नहीं मिले हैं।" यहूदी, पारसी, बहाई, सिख आदि धर्मों के इतिहास के अध्ययन से कहीं–न–कहीं, किसी–न–किसी रूप में उनके मिशनरी प्रवृत्ति के होने का आभास मिलता है। गुरू गोविन्द सिंह जी ने

कहा है, "इसी उद्देश्य के लिए मैं पैदा हुआ था, ईश्वर ने इस धर्म के प्रसार के लिए तूझे नियुक्त किया, जाओ और सर्वत्र धार्मिकता का प्रसार करो।"[8] हिन्दू धर्म भी जो कभी भारतीय उपमहाद्वीप तक ही सीमित था, अब विश्वजनीन रूप धारण करने लगा है। स्वामी विवेकानन्द ने हिन्दुओं से यह आव्हान किया था, "अपने धर्म के प्रचार के लिए तुम्हें अवश्य बाहर जाना चाहिए, सूर्य के नीचे जितने भी राष्ट्र हैं, सभी को इसका उपदेश दो, प्रत्येक देश में इसका प्रचार करो।"[9] 'रामकृष्ण मिशन', 'इस्कॉन', महर्षि महेश योगी द्वारा संस्थापित 'ट्रान्सेण्डेण्टल मेडिटेशन मूवमेण्ट', आर्य समाज, आनन्द मार्गी, सनातन धर्म संघ, विश्वहिन्दू परिषद आदि संस्थाएँ देश–विदेशों में धर्म–प्रचार–प्रसार कार्य में संलग्न हैं। अतः यह स्पष्ट है कि भले ही 'मिशन' और 'मिशनरी' शब्द अब तक बहुधा ईसाई मिशन और मिशनरियों के लिए प्रयोग किया जाता रहा हो, अब इनका प्रयोग सब धर्मों के प्रचार और प्रचारकों के लिए किया जाता है।

**अध्ययन का उदेश्य**

भारत में प्रचलित धर्मों में ईसाई धर्म का भावात्मक एवं विचारात्मक अध्ययन।

**भारत में ईसाई धर्म का प्रारंभ : कतिपय मान्यताएँ**

भारत में ईसाई धर्म का आगमन के संबंध में दो विचारधाराएँ प्रचलित हैं। अधिकांश विद्वानों का मानना है कि भारत में ईसाई धर्म का बीजारोपण व अंकुरण पहली सदी ईस्वी में ही हो चुका था जब स्वयं प्रभु ईसा के बारह शिष्यों में से एक या संभवतः दो– सन्त थॉमस और सन्त बर्थोलोमी 'सुसमाचार–प्रचार' का अधिदेश लेकर भारत आए। इतिहासकारों का एक दूसरा वर्ग भी है जो प्रेरितों के भारतागमन–सिद्धान्त को नकारते हुए भारत में सबसे पहले ईसाई धर्म के परिचय कराने का श्रेय पूर्वी सीरिया या फारसी कलीसिया[10] से संबद्ध व्यापारियों की व्यावसायिक गतिविधियों एवं मिशनरियों को देता है।[11] लगता है कि ऐसी मान्यता रखने वाले यह मानकर तर्क देते हों कि तत्कालीन परिवहन–व्यवस्था में किसी फिलिस्तीनी यहूदी का पहली शताब्दी ईस्वी में भारत की यात्रा करना संभव नहीं था।[12] लेकिन यह धारणा मात्र अनुमान पर ही आधारित लगती है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि प्राचीन काल से ही भारत का संबंध पाश्चात्य देशों के साथ रहा है। इस देश में पश्चिमी देशों से राजाओं और व्यापारियों का आवागमन हुआ है। भारत के साथ इनका संपर्क भूखण्ड के उत्तरी, दक्षिणी दोनों छोरों से हुआ करता था। उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र में स्थल–मार्ग से बोलन और खैबर घाटी होते हुए फारसी (ई.पू. 6वीं सदी) यूनानी (ई.पू. 4 सदी), सीथियन्स (ई.पू. 2–1 सदी) आदि पश्चिम के आक्रान्ताओं ने आर्यावर्त में प्रवेश किया।[13] "प्रमुख रूप से हीरे, मोती, जवाहरात, काली मिर्च और गर्म मसाले, सूती कपड़े तथा चीनी–रेशम"[14] –इन चीजों का व्यापार किया जाता था। "भारतीय व्यापारी भी अंतियोख, पल्मिरा, अलेक्जांड्रिया जैसे पश्चिमी शहरों में नियमित रूप से जाया करते थे और वहाँ के व्यापारियों तथा पर्यटकों को अपने यहाँ के व्यापार–केन्द्रों एवं बन्दरगाहों पर स्वागत किया करते थे।"[15] अतः प्रेरितों के भारतागमन–सिद्धान्त के विरोध करने वालों का तर्क तथ्यात्मक सिद्ध नहीं हो पाता। इस आधार पर यदि उपर्युक्त विचाराधारा को अमान्य कर दिया जाए तो प्रथम विकल्प ही विचारणीय रह जाता है।

**दक्षिण भारत में सन्त थॉमस का आगमन एवं क्रिया–कलाप**

सन्त थॉमस के भारत–आगमन और उनके क्रिया–कलापों के विषय में जो भारतीय विचारधारा है, उसकी रीढ़ *"सन्त थॉमस ईसाइयों "*[16] और कुछ हद तक उनके गैर–ईसाई पड़ोसियों के बीच पीढ़ियों से अनवरत चली आ रही सशक्त एवं जीवन्त जनश्रुति है। केरलवासी ये ईसाई अपने को सन्त थॉमस के अनुयायियों की सन्तति होने का दावा करते हैं। इन ईसाइयों को सीरियन ईसाई भी कहा जाता है क्योंकि प्रारंभ में इनकी देख–रेख पूर्वी सीरियाई कलीसिया द्वारा की जाती थी। इनके धर्माधिकारी बगदाद के अधिधर्माध्यक्ष द्वारा नियुक्त होते थे। इनकी उपासना, पूजन–पद्धति सीरियाई भाषा में होती थी।[17] इनके अनुसार प्रेरित सन्त थॉमस ने इनके पुरखों को सुसमाचार का संदेश सुनाया और कई ईसाई समुदायों की नींव डाली।[18] इस परंपरा के कुछ विवरण *रब्बन पाट्टु, वीरडियन पाट्टु, मार्गम् कलि पाट्टु* आदि गीतों तथा कुछ ऐतिहासिक वृत्तान्तों में प्राप्त होते हैं जो अब लिपिबद्ध हो चुके हैं।[18] इन ईसाई समुदायों की जीवन–परिस्थितियों, सामाजिक एवं पारिवारिक परंपराओं तथा रीति–रिवाजों में भी झलक दिखाई देती है। इन समुदायों की विभिन्न सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों में पवित्र बाइबिल अथवा सन्त थॉमस की जीवनी का कोई–न–कोई प्रसंग आंशिक रूप से अवश्य प्रकट होता है। कई एक ईसाई परिवार अपने को मूल रूप से केरल के नंबूदिरी ब्राह्मण परिवार के होने का दावा करते हैं। इन में से कुछ अब भी अपने नाम के साथ नंबूदिरी कुल–नाम का प्रयोग करते हैं। अनेक परिवारों के इतिहास उनके व्यक्तिगत पुरालेखागारों में ताड़पत्रों पर लिखित एवं सुरक्षित हैं। धर्माधिकार और पौरोहित्य का सौभाग्य कई सदियों तक केवल इन्हीं परिवारों को प्राप्त था। ऐसे परिवारों मे पकलोमट्टम, संकरापुरी, कल्ली, कलिकाव, कोयक्कम, मदेइपुर, मुट्टोडल, नेडुम्पल्ली, पनक्कमट्टम, कोट्टकली आदि प्रमुख हैं।[19]

प्रचलित इस परंपरा के अनुसार, सन्त थॉमस सन् 52 ई. में समुद्री मार्ग से केरल के पश्चिमी तट पर स्थित *'क्रेंगनूर* (Cranganore) या मुज़िरिस (Muziris) बंदरगाह पहुँचे। मुज़िरिस उस समय दक्षिण भारत का सबसे महत्त्वपूर्ण बन्दरगाह था।[20] *'क्रेंगनूर'* के लिए *'कोडुंगल्लूर'* [21] नाम भी प्रचलन में था। शायद इसका आधुनिक नाम *'कोट्टनल्लूर'* है।[22] *'पेरिप्लस'* (Periplus) के रचयिता ज्येष्ठ प्लिनी ने मुज़िरिस को नदी के मुहाने से दो मील दूरी पर स्थित एक समृद्ध नगर बताया है जो *'कोएलोबोत्रोस'* (Coelobothros) के शासनाधीन था। ए. सी. पेरूमालिल के विचार में *'कोएलोबोत्रोस' 'केरलपुत्र'* का यूनानी रूपान्तरण है जिसका अर्थ *'केरल का राजा'* है।[23] कहा जाता है कि सन्त थॉमस ने *क्रेंगनूर, पलयूर, क्यूलोन* आदि स्थानों पर धर्म–प्रचार कार्य किया और सवर्ण हिन्दुओं को धर्मान्तरित किया। यह बात तर्कसंगत प्रतीत होती है कि भारत स्थल और समुद्री दोनों मार्गों से जुड़ा हुआ एक प्रधान व्यापारिक केन्द्र रहा और व्यापार

की दृष्टि से मध्य एशिया से जल–मार्ग से आए यहूदियों ने केरल तट को न केवल अपना व्यापारिक केन्द्र बनाया बल्कि बस्तियाँ बनाकर निवास भी करने लगे। इस बात की प्रबल संभावना है कि इन्हीं यहूदियों के बीच ईसाई धर्म प्रचारार्थ सन्त थॉमस की आगमन केरल–तट पर हुआ हो। मलबार क्षेत्र मे धर्म–प्रचार–कार्यों के बाद वे पूर्वी तटवर्ती क्षेत्र कोरोमण्डल गए। वहाँ पर भी उन्होंने धर्म का प्रचार किया। कुछ विद्वानों का मानना है कि जल–मार्ग उपलब्ध होने के बावजूद सन्त थॉमस के स्थल–मार्ग से कोरोमण्डल पहुँचने की अधिक संभावना है।[25] कुछ समय बाद वे वहाँ से मलाक्का और चीन तक भी गए। वहाँ से मलबार लौटकर उन्होंने *क्रेंगनूर,* (मुज़िरिस,मलंकरा) *पलयूर* (चौघाट), *कोक्कमंगलम्, परवूर* (पारूर), *नीरानम, चायल* (निलक्कल), *कोल्लम* (क्यलोन)[26] आदि सात स्थानों पर अपने द्वारा धर्मान्तरित किये हुए लोगों को संगठित कर ईसाई–समुदायों की स्थापना की। उनके विश्वास को दृढ़ता प्रदान करने के लिए उन्होंने पुरोहितों एवं धर्माधिकारियों को अभिषिक्त व नियुक्त किया। उन्होंने कुछ उपासना स्थलों का भी निर्माण कराया। तत्पश्चात् वे पुनः कोरोमण्डल लौटे जहाँ कथित रूप से उनके सफल धर्म–प्रचार–कार्यों से विचलित होकर राजा महादेवन और उसके साथियों ने इस फिलिस्तीनी उपदेशक की इहलीला समाप्त करने का निश्चय किया। परिणामतः सन्त थॉमस मइलापुर के निकट स्थित एक छोटे से टीले पर जिसे अब *'लिटिल माउण्ट'* (Little Mount) कहा जाता है, शहीद हुए।[27] इनके शहादत–काल के सम्बन्ध में विद्वानों में एकमत नहीं है। मार्टिन गीलेन लिखते हैं : "मद्रास–मइलापुर की परंपरा के अनुसार सन्त थॉमस सन् 68 ई. में शहीद हुए, मलबार क्षेत्र में तो इसे सन् 72 ई. माना जाता है, जबकि पुर्तगालियों द्वारा इसे सन् 75 ई. बताया जाता है।[28] माना जाता है कि सन्त थॉमस के पार्थिव शरीर को मइलापुर लाकर उन्हीं के द्वारा निर्मित एक देवालय में दफनाया गया। बाद में दूसरी सदी ईस्वी में उनके अस्थि–अवशेषों को ले जाकर पूर्वी एशिया के एडेस्सा में समाधि दी गयी। मलबार पश्चिमी एशिया और सुदूर चीन से भी ईसाई मइलापुर की तीर्थयात्रा कर उन्हें अपना श्रद्धा–सुमन अर्पित किया करते थे।[29]

इस भारतीय मत के समर्थन में उपर्युक्त प्रबल जनश्रुति, अन्य दंतकथाओं एवं किंवदन्तियों के अतिरिक्त पुर्तगालियों के आगमन के पूर्व के कुछ अभिलेख भी प्राप्त होते हैं जिन में वेनिस–यात्री मार्को पोलो का कथन महत्त्वपूर्ण माना जाता है। लेकिन खेद की बात है कि उन्होंने यह बात सन्त थॉमस के भारत–आगमन के लगभग 1200 वर्ष बाद कही जो उसकी प्रामाणिकता पर प्रश्नचिह्न लगा देता है। मार्को पोलो जिसने सन् 1288 ई. और 1292 ई. में भारत की यात्रा की, लिखा है : "सन्त थॉमस का शव मलबार क्षेत्र के एक बहुत छोटे नगर के पास मौजूद है।..... बहुत से ईसाई वहाँ भक्तिवश आते हैं।"[30] अनुमान किया जाता है कि मार्को पालो का संकेत मइलापुर की ओर था। इस विचारधारा पर बल देने के लिए कुछ पुरावशेषों की भी गिनती की जाती है जिनमें से कुछ स्थानीय परम्परागत मान्यताओं की पुष्टि करते हैं। पलयूर और अन्य पारंपरिक चर्चों के आस–पास प्राप्त मदिरों के अवशेष इसके प्रमाण माने जाते हैं। *अलंगाड़, अर्थाड़* आदि स्थानों पर पाये गये पुराने क्रूस भी उल्लेखनीय हैं। *नीलम्पेरूर* और *किलिरूर* में खुदाई में मिले राजा के पुतले भी इस संबन्ध में महत्त्वपूर्ण हैं। इन से यह सिद्ध करने का प्रयास किया जाता है कि सन्त थॉमस ने राजाओं को भी धर्मान्तरित किया था। चूँकि इन अवशेषों का वैज्ञानिक ढंग से काल–निर्धारण करना अभी बाकी है, अतः निश्चयपूर्वक यह नहीं कहा जा सकता कि ये थॉमस कालीन हैं।[31]

विद्वानों का एक ऐसा भी वर्ग है जो यह मानता है कि उत्तर और दक्षिण भारत दोनों ही सन्त थॉमस के कार्य क्षेत्र रहे हैं। *'थोमा उत्तर भारत के प्रेरित', 'थोमा दक्षिण भारत के प्रेरित'* के लेखक डॉ. जे. एन. फरकुहर ने यह धारण व्यक्त की है कि "थोमा ने उत्तर भारत में सेवा की.... कुषाण हमलों के कारण उन्हें पंजाब छोड़ना पड़ा। वहाँ से वह दक्षिण भारत के पश्चिमी तट पर पहुँचे और वहाँ मण्डलियाँ स्थापित कीं। उसके पश्चात् संभव है कि वह बर्मा तक गए। लौटने पर उन्होंने कोरोमण्डल तट पर काम किया और वहीं शहीद हुए।"[32] इतिहास कार एच. हेरास भी इस विचार से सहमत हैं। प्राच्यशास्त्रविद् एडॉल्फ मेडलेकॉट का मानना है कि "थोमा ने दो यात्राएँ कीं। पहले वह भूमि के रास्ते उत्तर भारत में आए और उसके पश्चात् मिस्त्र और इथियोपिया होते हुए समुद्री रास्ते से दक्षिण भारत में आए।" यूजीन कार्डिनल टिस्सराँ, पी. एम. फिलिप और के. एन. डेनिएल भी सन्त थॉमस के उत्तर और दक्षिण भारत में आगमन की बात से सहमत हैं।

**सन्दर्भ ग्रन्थ सूची**

1. *वाद–बुल्के, (अनु), पवित्र बाइबिल, इसायह का ग्रंथ 61:1–2, सत्प्रकाशन, इन्दौर, 1990।*
2. *वही, योहन, 20:21 ।*
3. *वही, 28:19 ।*
4. *पी. राम, ईशानन्द वेम्पनी एवं सहयोगी, धर्मान्तरण और मिशनरी : एक झलक, सत्य मंथन संस्था, वाराणसी, 2000, पृ. 10 ।*
5. *Mircea Eliade (Ed.), The Encyclopaedia of Religion, Vol. 9; Macmillan publishing Company, New York, 1987, P.570 .*
6. *फारूक खाँ, कुरान मजीद, (हिन्दी अनुवाद), सूरा 2 –अल–बकरा, मकरजी मकतबा इस्लामी, दिल्ली, 1992, पृ. 59 ।*
7. *वही, सूरा 62–अल जुमुआ, पृ. 807 ।*
8. *धर्मांतरण और मिशनरी : एक झलक, पूर्वोक्त, पृ.14।*
9. *वही।*
10. *लूसी ए. मिल्न, पूर्वी कलीसियाओं का इतिहास, हिन्दी थियोलोजिकल लिटरेचर कमिटी, बरेली, 1980, पृ. 1–3।*
11. *A. M. Mundadan, History of Christianity in India, Vol. 1. Theological publications in India, Bangalore, 1984.*
12. *धरमवीर सिंग, भारतीय कलीसिया का संक्षिप्त इतिहास, नॉर्थ इण्डिया क्रिश्चियन ट्रैक्ट एण्ड बुक सोसाइटी, इलाहाबाद, 1990, पृ. 25।*

13. *A.M. Mundadan, History of Christianity in India, Vol.1. P.21.*
14. *एस. एन. वाल्द, भारत में प्रेरित सन्त थोमस, सत् प्रकाशन संचार केन्द्र, इंदौर, 1982, पृ. 53।*
15. *A.M. Mundadan, History of Christianity in India, Vol.1. P.13.*
16. *P. A. Augustine, Jesus and Christianity in India, Claretian Publications, Bangalore, 1999, P. 67.*
17. *एफ. एल. क्रॉस एवं इ. ए. लिविंगस्टन, ऑक्सफोर्ड कलीसिया ज्ञानकोश, पृ. 898.*
18. *A. Augustine, Jesus and Christianity in India, Opcit; P. 68.*
19. *A.M. Mundadan, Sixteenth Century Traditions of St. Thomas Christians, Bangalore, 1970, Pp. 60-67.*
20. *A.M. Mundadan, History of Christianity in India, Vol. 1, P. 33.*
21. *V. Titus Varghese and P.P. Philip, Glimpses of the History of the Christian Churches in India, P. 5.*
22. *A. Mampra & J. Puthenkalam, Sanctity in India, The Retreat, Yercaud, 2000, P. 32.*
23. *Solomon Doraiswamy, Christianity in India, Unique and Universal Mission, The Christian Literature Society, Madras, 1986, P.4.*
24. *A. Mampra& J. Puthenkalam, Sanctity in India, P. 26.*
25. *A. Mampra& J. Puthenkalam, Sanctity in India, P. 29.*
26. *लूसी ए. मिल्न, पूर्वी कलीसियाओं का इतिहास, हिन्दी थियॉलोजिकल लिटरेचर कमेटी, बरेली, 1980 पृ. 142.*
27. *A. Mampra& J. Puthenkalam, Sanctity in India, P.30.*
28. *Martin Gielen, St. Thomas, the Apostle of India, Kottayam, 1990, P. 186.*
29. *A.M. Mundadan, Sixteenth Century Traditions of St. Thomas Christians, Bangalore, 1970, Pp. 38-67.*
30. *धरमवीर सिंग, भारतीय कलीसिया का संक्षिप्त इतिहास, पृ.17.*
31. *A.M. Mundadan, History of Christianity in India, Vol. 1, PP. 34-35.*
32. *धरमवीर सिंग, भारतीय कलीसिया का संक्षिप्त इतिहास, पृ. 25।*